अपीलीय सिविल

माननीय न्यायाधीश डी. एस. तेवतिया के समक्ष

हरियाणा वित्तीय निगम - अपीलकर्ता

बनाम

मेसर्स डोगरा स्टील इंडस्ट्रीज आदि - प्रतिवादी

1970 के आदेश क्रमांक 188 से प्रथम अपील
24 मार्च 1972

सिविल प्रक्रिया संहिता (1908 का अधिनियम V) - आदेश 34, नियम 10 और 11(बी) - अभिव्यक्ति 'वास्तिवक संदाय की तारीख/प्राप्ति की तारीख़'- इस अभिव्यक्ति का अर्थ - निर्धारित- डिक्रीदार- क्या डिक्रीदार डिक्रीटल राशि की वसूली की तारीख तक, सभी आकस्मिक प्रासंगिक व्यय का दावा करने का हकदार है।

अभिनिर्धारित, कि अभिव्यक्ति "प्राप्ति" का अर्थ है वह समय जब बन्धकार वास्तव में नकदी को संभालने का हकदार हो जाता है और जब तक लोक नीलाम द्वारा विक्रय की पुष्टि नहीं हो जाती तब तक उसे इसका हकदार नहीं माना जा सकता है। जहां कुछ अवधि विक्रय की पुष्टि की तारीख को उस तारीख से अलग करती है जिस पर राशि वास्तव में डिक्रीदार को वितरित की जाती है, मूल सिद्धांत जिसे ध्यान में रखा जाना चाहिए वह यह है कि किस विशेष तारीख को डिक्रीदार कानूनी रूप से भुगतान प्राप्त करने की स्थिति में था। यदि वह तारीख विक्रय की पुष्टि की तारीख से मेल खाती है तो यह वह तारीख है जिसे वसूली की तारीख माना जाना चाहिए और यदि उस तारीख को डिक्रीदार कानूनी रूप से डिक्रीटल राशि की वसूली करने की स्थिति में नहीं है, तो यह वह तारीख है जिस दिन वह ऐसी स्थिति में पाया जाता है जिसे माना जाएगा 'राशि की वसूली की तारीख' के रूप में।

(पैरा 5 और 6)

अभिनिर्धारित, कि सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 34 के नियम 10 का अवलोकन करने से इसमें कोई संदेह नहीं रह जाता है कि डिक्रीदार, डिक्रीटल राशि की वसूली की तारीख तक उसके द्वारा किए गए सभी उचित आकस्मिक शुल्कों का हकदार है।

(पैरा 8)

श्री ए.के. जैन, अतिरिक्त जिला न्यायाधीश, गुड़गांव के न्यायालय के दिनांक 7 नवंबर, 1970, 9 नवंबर, 1970 के आदेश जिसमें आवेदक के आवेदन को लागत के साथ अनुमति दी गई और अपीलार्थी को 1,55,927.56 रुपये का भुगतान करने का आदेश दिया गया, के विरुद्ध पहली अपील की गयी हैं।

अपीलकर्ता की ओर से के.एल. कपूर, अधिवक्ता।

एच. एल. सरीन, अधिवक्ता, एम. एल. सरीन और के. टी. एस. तुलसी, प्रतिवादी नंबर 1 के अधिवक्ता और कुलदीप सिंह, अधिवक्ता, प्रतिवादी नंबर 2 के लिए।

<u>निर्णय</u>

<u>माननीय न्यायाधीश दी. एस. तेवतिया :</u>

प्रतिवादी नंबर 1, ने 1.75 लाख रुपये का ऋण पंजाब वित्तीय निगम से लिया, 27 अगस्त 1959 के एक पंजीकृत बंधक विलेख के आधार पर। 1 अप्रैल 1967 को; पंजाब वित्तीय निगम को पुनर्गठित किया गया और उक्त ऋण हरियाणा वित्तीय निगम (इसके बाद डिक्रीदार के रूप में संदर्भित) के हिस्से में आ गया, जो उक्त पुनर्गठन के परिणामस्वरूप अस्तित्व में आया। प्रतिवादी नंबर 1, मेसर्स डोगरा स्टील इंडस्ट्रीज, फ़रीदाबाद (इसके बाद निर्णीतऋणी कहा जाएगा) द्वारा ऋण और बंधक विलेख की शर्तों का पालन करने में विफलता पर, डिक्रीदार ने राज्य वित्तीय निगम अधिनियम, 1951 की धारा 31 के तहत

कार्यवाही की। और उक्त कार्यवाही के दौरान मेसर्स डोगरा स्टील इंडस्ट्रीज, फ़रीदाबाद ने हरियाणा वित्तीय निगम के दावे को पूरी तरह से स्वीकार कर लिया और उक्त स्वीकृति के अनुसार, जिला न्यायाधीश, गुड़गांव ने दावे पर आदेश, दिनांक 19 जून, 1967 के तहत फैसला सुनाया। उक्त आदेश में अन्य बातों के साथ-साथ यह प्रावधान किया गया कि डिक्रीदार वसूली की तारीख तक आवेदन में प्रार्थना के अनुसार भविष्य के ब्याज और आकस्मिक व्ययों का हकदार होगा। जिला न्यायाधीश के उपरोक्त आदेश, दिनांक 19 जून, 1967 के अनुपालन में, बंधक संपत्ति को न्यायालय द्वारा विक्रय के लिए रखा गया था। हालाँकि, उक्त नीलामी 1 फरवरी, 1969 को रद्द कर दी गई थी। नीलामी क्रेता, जिसने दूसरी विक्रय पर उक्त संपत्ति खरीदी थी, ने 28 जून, 1969 को पूरी खरीद राशि अदालत में जमा कर दी। हालाँकि दूसरी विक्रय पर आपत्तियों को 3 अप्रैल, 1970 को अतिरिक्त जिला न्यायाधीश द्वारा खारिज कर दिया गया था, लेकिन अतिरिक्त जिला न्यायाधीश ने डिक्रीदार को 1,500,927.56 रुपये का भुगतान वाउचर 9 नवंबर, 1970 से पहले जारी नहीं किया चूँकि एक ओर डिक्रीदार और दूसरी ओर कुछ हस्तक्षेपकर्ताओं के बीच राशि से भुगतान जो निर्णीतऋणी की संपत्ति की उक्त नीलामी से प्राप्त हुई थी जो न्यायालय के पास जमा है, की प्राथमिकता के संबंध में विवाद को निपटाने में उन्हें काफी समय लगा।

(2) विद्वान अतिरिक्त जिला न्यायाधीश ने मूल ऋण राशि पर केवल साधारण ब्याज की अनुमति दी और वह भी 28 जून, 1969 तक, यानी विक्रय आय जमा करने की तारीख तक। उन्होंने उन आकस्मिक खर्चों को भी अनुमति दी जो केवल 28 जून, 1969 तक किए गए थे और 28 जून, 1969 और 29 नवंबर, 1970 के बीच किए गए खर्चों की अनुमति नहीं दी गई, जिस तारीख को वास्तविक भुगतान प्रभावी हुआ था, - जैसे कि निर्णीतऋणी की बंधक फैक्ट्री की इमारत और उसमें स्थापित मशीनरी के बीमा के लिए प्रीमियम के कारण विक्रय की पुष्टि से पहले अपीलकर्ता द्वारा खर्च की गई 308.75 रुपये की राशि; न्यायालय में नीलामी में भाग लेने के लिए डिक्रीदार के अधिकारी को 34.60 रुपये का यात्रा भत्ता दिया गया; बन्धक संपत्तियों के संबंध में दिल्ली उच्च न्यायालय में निर्णीतऋणी के खिलाफ मुकदमे में डिक्रीदार का प्रतिनिधित्व करने में डिक्रीदार द्वारा खर्च की गई 403 रुपये की राशि और

अतिरिक्त जिला न्यायाधीश की अदालत में कार्यवाही के संचालन में स्थानीय अधिवक्ता द्वारा किए गए खर्च के लिए 57.30 रुपये की राशि।उक्त आदेश से व्यथित डिक्रीदार अपील में आया है।

(3) अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता, श्री के.एल. कपूर ने आग्रह किया है कि डिक्रीदार डिक्रीटल राशि की वसूली की तारीख, यानी 9 नवंबर, 1970 तक चक्रवृद्धि ब्याज के भुगतान का हकदार था। उनका यह भी कहना है कि डिक्रीदार, 26 जून, 1969 से 9 नवंबर, 1970 की अवधि के बीच उसके द्वारा किए गए उपरोक्त खर्चों की प्रतिपूर्ति का भी हकदार था।

(4) अपनी पहली प्रस्तुति के समर्थन में श्रीमान के. एल. कपूर ने मेघराज मारवाड़ी बनाम नर्सिंग मोहन ठाकुर (आई.एल.आर. (1906) XXXIII कैल 846.), रामचन्द्र मारोतराव वंजारी बनाम रामचन्द्र गुजाबा श्रावणे (ए.आई.आर. 1938 नागपुर 54.) और खलीलुल रहमान बनाम गोकुल चंद (ए.आई.आर. 1919 सभी. 253.), पर आश्रय किया हैं।

(5) दोनों पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने के बाद और मामले पर सावधानीपूर्वक विचार करने के बाद, मैं इस राय पर सहमत हूँ, कि यह अपील सफल होनी चाहिए। निर्णय के लिए जो संक्षिप्त बिंदु उठता है वह उस अर्थ से संबंधित है जिसे "प्राप्ति की तारीख तक" अभिव्यक्ति के रूप में वर्णित किया जाना चाहिए। क्या वसूली की तारीख अदालत में विक्रय की आय जमा करने की तारीख से मेल खाती है या वह तारीख जिस पर अदालत में जमा किया गया पैसा डिक्रीदार को उपलब्ध हो जाता है। श्री के.एल. कपूर द्वारा भरोसा किए गए सभी तीन प्राधिकरणों में, यह निर्धारित किया कि अभिव्यक्ति "प्राप्ति" का अर्थ है वह समय जब बन्धकार वास्तव में नकदी को संभालने का हकदार हो जाता है और जब तक लोक नीलाम द्वारा विक्रय की पुष्टि नहीं हो जाती तब तक उसे इसका हकदार नहीं माना जा सकता है।वर्तमान मामले में लगभग सात महीने और छह दिनों की अवधि विक्रय की पुष्टि की तारीख को अलग करती है, जो कि 3 अप्रैल, 1970 को उस तारीख से है जिस दिन न्यायालय द्वारा वास्तविक वाउचर तैयार किया गया और डिक्रीदार को सौंप दिया गया था।

(6) श्री कृष्ण लाल कपूर ने आग्रह किया है कि डिक्रीदार न केवल 3 अप्रैल 1970 की तारीख तक बल्कि 9 नवंबर 1970 तक भविष्य के चक्रवृद्धि ब्याज का हकदार है, जो कि डिक्री-धारक को भुगतान वाउचर की डिलीवरी की तारीख है। उनका कहना है कि जिस फैसले पर उन्होंने आश्रय किया, उसमें अदालत ने वसूली की तारीख को विक्रय की पुष्टि की तारीख माना क्योंकि उन मामलों में भुगतान वाउचर विक्रय की पुष्टि के अगले दिन तैयार किया गया था और भुगतान अगले दिन प्रभावी हुआ था। उनका कहना है कि वसूली की तारीख निर्धारित करने में मूल सिद्धांत जिसे ध्यान में रखा जाना चाहिए वह यह है कि किस विशेष तारीख को, डिक्रीदार कानूनी रूप से भुगतान प्राप्त करने की स्थिति में था। यदि वह तारीख विक्रय की पुष्टि की तारीख से मेल खाती है तो यह वह तारीख है, जिसे वसूली की तारीख माना जाना चाहिए, और यदि उस तारीख पर डिक्रीदार कानूनी रूप से डिक्रीटल राशि को प्राप्त करने की स्थिति में नहीं है तो यह वह तारीख है जिस दिन वह ऐसी स्थिति में पाया जाता है, जिसे राशि की वसूली की तारीख के रूप में माना जाना चाहिए क्योंकि उनका कहना है कि डिक्रीटल राशि की वसूली को न्यायालय द्वारा इसकी वसूली के संदर्भ में नहीं समझा जाना चाहिए, लेकिन डिक्रीदार को इसकी प्राप्ति या भुगतान के लिए समझा जाना चाहिए। इस प्रस्तुतिकरण के समर्थन में वह सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश XXXIV नियम 11(बी) के प्रावधानों का संदर्भ देते हैं, जो निम्नलिखित शब्दों में हैं: -

> "पूरोबंध, विक्रय या मोचन के वाद में पारित किसी भी डिक्री में न्यायालय जहां ब्याज वैध रूप से वासूलिय हो, यह आदेश दे सकेगा की बन्धकदार को निम्नलिखित ब्याज दिया जाए, अर्थात् -
>
> (अ) *   *   *   *   *
>
> (ब) ऐसी दर से जो न्यायालय युक्तियुक्त समझें, उन मूल राशियों के खंड(क) में विनिर्दिष्ट हैं, उस खंड के अनुसार संगणित योग पर वसूली की या वास्तविक संदाय की तारीख़ का पश्चिक ब्याज"

मुझे लगता है कि विद्वान अधिवक्ता द्वारा दिए गए तर्क में दम है। स्पष्ट रूप से डिक्रीदार कानूनी तौर पर विक्रय की पुष्टि की तारीख पर डिक्रीटल राशि की प्राप्ति करने की स्थिति में नहीं था क्योंकि निर्णीतऋणी के कुछ अन्य लेनदारों ने अदालत के पास पड़ी राशि पर अपना दावा किया था और अदालत ने फैसला किया था की संबंधित राशि के विवादित दावों पर निर्णय लेने के बाद ही भुगतान वाउचर तैयार करेंगे। निष्कर्ष से पहले इन सहायक कार्यवाहियों में से डिक्रीदार, कानूनी तौर पर डिक्रीटल राशि की प्राप्ति नहीं कर सका। इस प्रकार डिक्रीदार, यानी अपीलकर्ता-निगम की कोई गलती नहीं थी कि इस स्वीकृत राशि की वसूली की देरी में। इसलिए वसूली की तारीख को वह तारीख माना जाना चाहिए जिस दिन न्यायालय ने भुगतान वाउचर तैयार किया था, यानी 9 नवंबर, 1970। सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश XXXIV के नियम 11 की सामग्री, मेरे द्वारा लिए गए विचार का समर्थन करती हैं। इसलिए, मेरा मानना है कि अपीलकर्ता-निगम 9 नवंबर, 1970 तक भविष्य के ब्याज का हकदार था।

(7) अब, अगला प्रश्न जो विचार के लिए उठता है वह यह है कि क्या डिक्रीदार, साधारण ब्याज या चक्रवृद्धि ब्याज का हकदार था। इस संबंध में जिला न्यायाधीश, गुड़गांव का आदेश, दिनांक 19 जून, 1967, अपीलकर्ता-निगम के पक्ष में दावे पर फैसला करते हुए स्थिति स्पष्ट करता है। यह स्पष्ट रूप से प्रदान करता है कि डिक्रीदार, दावे के अनुसार भविष्य के ब्याज का हकदार होगा, और डिक्रीदार द्वारा जिस ब्याज का दावा किया गया था, जैसा कि आदेश में देखा गया था, वह अर्धवार्षिक विश्राम के साथ 9 प्रतिशत की दर से चक्रवृद्धि ब्याज था। इसलिए इसे देखते हुए अतिरिक्त जिला न्यायाधीश का यह मानना सही नहीं था कि डिक्रीदार केवल साधारण ब्याज का हकदार था। मेरा मानना है कि अपीलकर्ता-निगम मूल राशि पर भविष्य में चक्रवृद्धि ब्याज का हकदार था।

(8) अंतिम प्रस्तुतिकरण जो विचार के लिए बचा हुआ है वह आकस्मिक खर्चों से संबंधित है, जिसके लिए डिक्रीदार हकदार है। इस संबंध में श्री के.एल. कपूर ने सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश XXXIV नियम 10 का संदर्भ दिया है, जो निम्नलिखित शब्दों में है:-

> "पूरोबंध, विक्रय या मोचन की दशा में जो रक़म बन्धकदार को दी जानी हैं उसका अंतिम रूप से समायोजन करने में न्यायालय तब के सिवाय जब की वाद में खर्च की दशा में उसका आचरण ऐसा हो रहा हैं जो उसे उनके के लिए निर्हरित कर देता हैं ऐसे वाद के ख़र्चे और अन्य खर्चे, प्रभार और व्यय, जो पूरोबंध, विक्रय या मोचन के लिए प्रारम्भिक डिक्री की तारीख़ से वास्तविक संदाय के समय तक उसके द्वारा समुचित रूप से उपगत किए जाएँगे, अन्यथा निदेश न दे।"

इस नियम का अवलोकन करने से इसमें कोई संदेह नहीं रह जाता है कि डिक्रीदार वसूली की तारीख, यानी 9 नवंबर, 1970 तक उसके द्वारा किए गए सभी उचित आकस्मिक ख़र्चो का हकदार था। अपीलकर्ता-निगम द्वारा जिन खर्चों का दावा किया गया था और अतिरिक्त जिला न्यायाधीश द्वारा अस्वीकार कर दिया गया था, मेरी राय में, वे काफी उचित हैं और और प्रतिवादी के विद्वान अधिवक्ता ने प्रश्नगत खर्चों की तर्कसंगतता को इस न्यायालय में चुनौती नहीं दी है। इसलिए मेरी राय है कि अपीलकर्ता-निगम इन खर्चों के भुगतान का भी हकदार है और इसलिए मेरा मानना है कि अतिरिक्त जिला न्यायाधीश ने इसे अस्वीकार करके सही नहीं किया।

(9) उपरोक्त संदर्भित कारणों से मैं आदेश देता हूँ कि डिक्रीदार, 9 नवंबर, 1970 तक मूल राशि पर भविष्य चक्रवृद्धि ब्याज और अपीलकर्ता-निगम द्वारा किए गए आकस्मिक खर्चों के दावे का हकदार है।

(10) अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता श्री के.एल. कपूर ने उस कुल राशि की गणना की है जिसका वह हकदार है और यह 1,81,909.70 रुपये है। विद्वान जिला न्यायाधीश ने केवल 1,55,927.56 रुपये की राशि के भुगतान की अनुमति दी और इसलिए अपीलकर्ता शेष राशि का हकदार है, जो 25,982.14 रुपये है।प्रतिवादी के विद्वान अधिवक्ता ने अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता द्वारा दिए गए और यहां उल्लिखित इन आंकड़ों की सत्यता को चुनौती नहीं दी है।

(11) उपरोक्त संदर्भित कारणों से यह अपील लागत सहित स्वीकार की जाती है।

<u>अस्वीकरण : स्थानीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के सीमित उपयोग के लिए है ताकि वह अपनी भाषा में इसे समझ सके और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है । सभी व्यवहारिक और आधिकारिक उद्देश्यो के लिए निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रमाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य के लिए उपयुक्त रहेगा ।</u>

ऋतु तंवर

प्रिशक्षु न्यायिक अधिकारी

(Trainee Judicial Officer)

हरियाणा न्यायिक सर्विसेज़